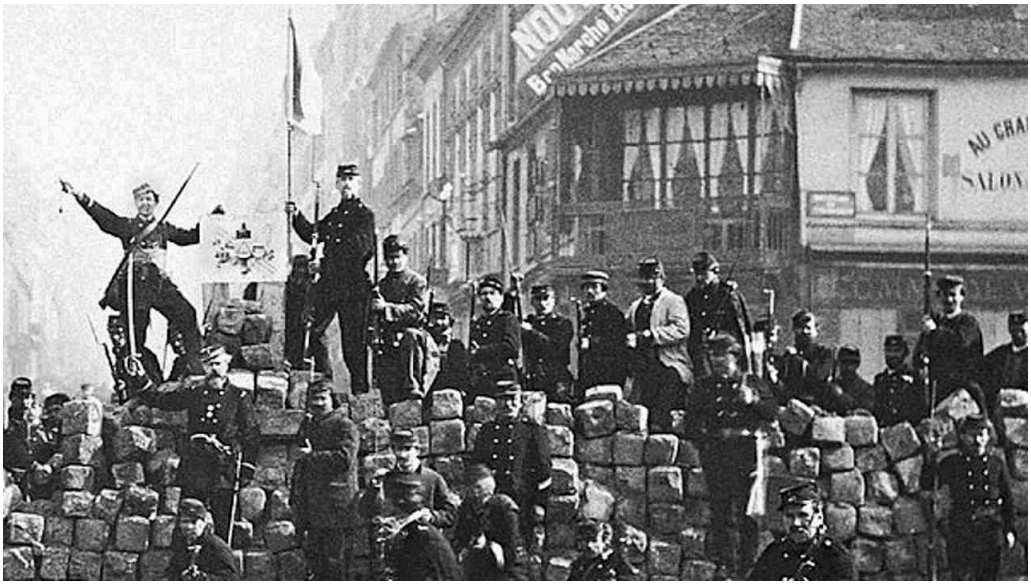




लेख

प्रथम इंटरनेशनल और उसकी समकालीन प्रासंगिकता

Share:



प्रथम इंटरनेशनल और उसकी समकालीन प्रासंगिकता

-- मार्सेलो मुस्तो

[पेरिस कम्यून की 154वीं वर्षगांठ के अवसर पर वह क्रांतिकारी मजदूर सरकार जिसने 18 मार्च से 28 मई 1871 तक पेरिस पर शासन किया था, हम मार्सेलो मुस्तो का यह लेख पुनर्प्रकाशित कर रहे हैं. यह लेख इंटरनेशनल वर्किंग मेन्स एसोसिएशन के इतिहास और उससे मिलने वाली उन शिक्षाओं की समीक्षा करता है जो आज भी उतनी ही महत्वपूर्ण हैं: मेहनतकश वर्ग की एकजुटता, अंतरराष्ट्रीयतावाद, पूंजीवाद-विरोधी संघर्ष, तथा शोषण, युद्ध और असमानता के खिलाफ व्यापक जनआंदोलनों के निर्माण की जरूरत.

पूंजीवाद द्वारा पैदा किए गए हालिया संकटों ने शोषण, गरीबी और असमानताओं को पहले से भी अधिक तीखा बना दिया है. ऐसे दौर में

1864 में स्थापित इस संगठन की विरासत फिर से प्रासंगिक हो उठी है, और उसकी शिक्षाएं आज पहले से कहीं अधिक अहमियत रखती हैं.]

इंटरनेशनलिज्म की शुरुआत

28 सितंबर 1864 को अपनी पहली बैठक के बाद इंटरनेशनल वर्किंग मेन्स एसोसिएशन (जिसे आमतौर पर 'प्रथम इंटरनेशनल' कहा जाता है) ने बहुत तेजी से पूरे यूरोप में उत्साह और चर्चा पैदा कर दी. इसने वर्गीय एकजुटता को एक साझा आदर्श बनाया और बड़ी संख्या में महिलाओं और पुरुषों को शोषण के खिलाफ संघर्ष के लिए प्रेरित किया. इसकी गतिविधियों की बदौलत मजदूर पूंजीवादी उत्पादन प्रणाली के तौर-तरीकों को अधिक स्पष्टता से समझ सके, अपनी सामूहिक ताकत के प्रति अधिक जागरूक हुए और अपने अधिकारों के लिए संघर्ष के नए तथा अधिक उन्नत रूप विकसित कर सके.

जब इंटरनेशनल की स्थापना हुई, तब उसकी सबसे महत्वपूर्ण प्रेरक शक्ति ब्रिटिश ट्रेड यूनियन आंदोलन था, जिसके नेता मुख्यतः आर्थिक सवालों पर केंद्रित थे. वे मजदूरों की हालत बेहतर बनाने के लिए संघर्ष करते थे, लेकिन पूंजीवादी व्यवस्था को चुनौती नहीं देना चाहते थे. इसलिए वे इंटरनेशनल को मुख्यतः एक ऐसे साधन के रूप में देखते थे, जो हड़तालों के दौरान विदेशों से सस्ते श्रमिकों की भर्ती को रोक सके. इंटरनेशनल के भीतर दूसरा महत्वपूर्ण समूह फ्रांस के म्यूचुअलिस्टों का था, जिनका लंबे समय तक वहां प्रभाव रहा था. पिएर जोसेफ प्रूधों के सिद्धांतों के अनुरूप वे मजदूर वर्ग की राजनीतिक भागीदारी का विरोध करते थे और हड़ताल को भी संघर्ष के हथियार के रूप में स्वीकार नहीं करते थे. इसके अलावा कम्युनिस्ट भी थे, जो मौजूदा उत्पादन व्यवस्था का विरोध करते थे और उसे उखाड़ फेंकने के लिए राजनीतिक संघर्ष की आवश्यकता पर जोर देते थे. इंटरनेशनल की स्थापना के समय उसमें ऐसे कई मजदूर भी शामिल थे जो काल्पनिक समाजवादी (यूटोपियन) विचारों से प्रेरित थे, साथ ही निर्वासित राजनीतिक कार्यकर्ता भी थे जिनके लोकतांत्रिक विचार अस्पष्ट थे और जो वर्गों के पार एकता की अवधारणा रखते थे. वे इंटरनेशनल को मुख्यतः उत्पीड़ित राष्ट्रों और जनता की मुक्ति के लिए सामान्य अपीलें जारी करने के मंच के रूप में देखते थे. इस प्रकार, अपने शुरुआती दौर में इंटरनेशनल एक ऐसा संगठन था जिसमें अनेक राजनीतिक परंपराएं साथ-साथ मौजूद थीं, और जिनमें से अधिकांश सुधारवादी थीं, क्रांतिकारी नहीं.

इन तमाम धाराओं को एक ऐसे साझा कार्यक्रम के इर्द-गिर्द साथ बनाए रखना, जो उनकी शुरुआती मान्यताओं से काफी अलग था, कार्ल मार्क्स की सबसे बड़ी राजनीतिक कामयाबी थी. उनकी राजनीतिक क्षमता ने उन प्रवृत्तियों को भी साथ लाने में सफलता हासिल की जिन्हें पहली नजर में एक-दूसरे के साथ जोड़ना असंभव लगता था. इंटरनेशनल को स्पष्ट दिशा

देने वाले व्यक्ति मार्क्स ही थे. उन्होंने ऐसा राजनीतिक कार्यक्रम तैयार किया जो किसी को बाहर करने वाला नहीं था, लेकिन जिसकी बुनियाद मजदूर वर्ग की स्वतंत्र राजनीति पर दृढ़ता से टिकी हुई थी. इसी वजह से इंटरनेशनल को संकीर्ण गुटबाजी से ऊपर उठकर व्यापक जनसमर्थन मिला. मार्क्स उसके जनरल काउंसिल की राजनीतिक आत्मा थे. यही वह निकाय था जो विभिन्न धाराओं के बीच एक साझा समझ विकसित करता था और पूरे संगठन के लिए दिशा-निर्देश तय करता था. इंटरनेशनल के लगभग सभी प्रमुख प्रस्तावों का मसौदा मार्क्स ने तैयार किया और उसके लगभग सभी कांग्रेस प्रतिवेदनों को लिखने की जिम्मेदारी भी उन्होंने ही निभाई.

फिर भी, बाद के वर्षों में सोवियत संघ के प्रचारतंत्र द्वारा बनाई गई छवि के विपरीत, यह संगठन किसी एक व्यक्ति की रचना भर नहीं था, चाहे वह व्यक्ति मार्क्स जितना प्रतिभाशाली ही क्यों न हो. यह मेहनतकश वर्ग की मुक्ति के लिए खड़ा हुआ एक विशाल सामाजिक और राजनीतिक आंदोलन था; जैसा कि अक्सर लिखा जाता है, यह 'मार्क्स की रचना' नहीं थी. इंटरनेशनल का जन्म सबसे पहले 1860 के दशक में उभरे मजदूर आंदोलनों और उनके संघर्षों की बदौलत संभव हुआ. उसके बुनियादी नियमों में से एक – और उससे पहले के मजदूर संगठनों से उसका सबसे बुनियादी फर्क – यह था कि 'मेहनतकश वर्ग की मुक्ति का काम स्वयं मेहनतकश वर्ग को ही करना होगा.' यह धारणा कि मार्क्स ने अपने अध्ययन-कक्ष में पहले से तैयार किसी राजनीतिक सिद्धांत को इतिहास के मंच पर यांत्रिक ढंग से लागू कर दिया था, ऐतिहासिक सच्चाई से मेल नहीं खाती. मार्क्स इंटरनेशनल के लिए बेहद महत्वपूर्ण थे, लेकिन इंटरनेशनल का प्रभाव भी मार्क्स पर उतना ही सकारात्मक और गहरा पड़ा. मजदूरों के संघर्षों से सीधे जुड़ने के कारण मार्क्स को अपने विचारों को और विकसित करने, कई बार उनमें संशोधन करने, पुरानी निश्चित मान्यताओं पर पुनर्विचार करने और नए सवाल उठाने की प्रेरणा मिली. इसी प्रक्रिया में उन्होंने पूंजीवाद की अपनी आलोचना को और अधिक पैना बनाया तथा भावी साम्यवादी समाज की व्यापक रूपरेखा को भी अधिक स्पष्टता से सामने रखा.

सिद्धांत और संघर्ष

उन्नीसवीं सदी के साठ के दशक के उत्तरार्ध और सत्तर के दशक की शुरुआत में यूरोप में तीखे सामाजिक संघर्षों का दौर था. विरोध-प्रदर्शनों और आंदोलनों में भाग लेने वाले अनेक मजदूरों ने इंटरनेशनल से संपर्क स्थापित करने का फैसला किया, जिसकी प्रतिष्ठा और प्रभाव बहुत तेजी से फैल रहा था. 1866 के बाद अनेक देशों में हड़तालों की संख्या और तीव्रता दोनों बढ़ीं, और वे मजदूर आंदोलनों की एक नई तथा महत्वपूर्ण लहर का केंद्र बन गईं. फ्रांस, बेल्जियम और स्विट्जरलैंड में मजदूरों द्वारा

जीते गए कई संघर्षों में इंटरनेशनल ने निर्णायक भूमिका निभाई. इन संघर्षों का स्वरूप अक्सर एक जैसा होता था. दूसरे देशों के मजदूर हड़ताली श्रमिकों के समर्थन में आर्थिक सहायता जुटाते थे और यह भी तय करते थे कि वे ऐसे काम स्वीकार नहीं करेंगे जिससे उन्हें मालिकों के लिए औद्योगिक भाड़े के मजदूर की भूमिका निभानी पड़े. नतीजतन, पूंजीपतियों और कारखाना मालिकों को हड़तालियों की अनेक मांगें मानने के लिए समझौता करना पड़ा. इन सफलताओं में उन अखबारों की भी बड़ी भूमिका थी जो या तो इंटरनेशनल के विचारों के प्रति सहानुभूति रखते थे या फिर सीधे उसके जनरल काउंसिल के मुखपत्र के रूप में काम करते थे. इन अखबारों ने वर्गीय चेतना के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया और इंटरनेशनल की गतिविधियों से जुड़ी खबरों को तेजी से एक देश से दूसरे देश तक पहुंचाने का काम किया.

पूरे यूरोप में इंटरनेशनल ने एक प्रभावशाली संगठनात्मक ढांचा खड़ा किया और अपने सदस्यों की संख्या में लगातार वृद्धि की. अपने चरम दौर में इसके लगभग डेढ़ लाख सदस्य थे. विभिन्न राष्ट्रीयताओं, भाषाओं और राजनीतिक संस्कृतियों से पैदा होने वाली तमाम कठिनाइयों के बावजूद, इंटरनेशनल अनेक संगठनों और स्वतःस्फूर्त जनसंघर्षों के बीच एकता और समन्वय कायम करने में सफल रहा. उसकी सबसे बड़ी उपलब्धि यह थी कि उसने वर्गीय एकजुटता और अंतरराष्ट्रीय सहयोग के निर्णायक महत्व को व्यवहार में साबित किया.

इंटरनेशनल मजदूर आंदोलन की कुछ सबसे महत्वपूर्ण वैचारिक बहसों का मंच भी बना. साम्यवाद और अराजकतावाद जैसे प्रश्नों पर हुई चर्चाएं आज भी राजनीतिक इतिहास का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं. इंटरनेशनल की कांग्रेसें वह जगह थीं जहां पहली बार एक बड़े अंतरराष्ट्रीय संगठन ने उन बुनियादी सवालों पर सामूहिक फैसले लिए, जिन पर उसकी स्थापना से पहले भी बहसें चल रही थीं. बाद में यही सवाल दुनिया भर के समाजवादी आंदोलनों के राजनीतिक कार्यक्रमों के केंद्रीय तत्व बने. इनमें ट्रेड यूनियनों की अपरिहार्य भूमिका, भूमि और उत्पादन के साधनों के सामाजिक स्वामित्व की आवश्यकता, चुनावों में भागीदारी का महत्व तथा मजदूर वर्ग की स्वतंत्र राजनीतिक पार्टियों के माध्यम से ऐसा करने की जरूरत, महिलाओं की मुक्ति का प्रश्न, और युद्ध को पूंजीवादी व्यवस्था की अनिवार्य उपज के रूप में समझने की अवधारणा शामिल थीं.

इंटरनेशनल का प्रभाव केवल यूरोप तक सीमित नहीं रहा. अटलांटिक महासागर के उस पार, हाल के वर्षों में अमेरिका पहुंचे प्रवासियों ने वहां इंटरनेशनल की पहली शाखाएं स्थापित करनी शुरू कर दीं. फिर भी, संगठन अपने जन्मकाल से ही दो ऐसी कमजोरियों से ग्रस्त था जिन्हें वह कभी पूरी तरह दूर नहीं कर सका. पहली, लंदन स्थित जनरल काउंसिल की बार-बार की अपीलों के बावजूद, वह अपनी विभिन्न संबद्ध इकाइयों के

भीतर मौजूद राष्ट्रीयतावादी सीमाओं को पूरी तरह नहीं तोड़ पाया. दूसरी, वह अमेरिका में जन्मे स्थानीय मजदूरों को बड़े पैमाने पर अपने साथ जोड़ने में असफल रहा. दिसंबर 1870 में जब जर्मन, फ्रांसीसी और चेक शाखाओं ने उत्तरी अमेरिका के लिए इंटरनेशनल की केंद्रीय कमेटी का गठन किया, तो यह इंटरनेशनल के इतिहास में एक अनोखी घटना थी. इस कमेटी के सभी सदस्य विदेशों में जन्मे प्रवासी थे. इस असामान्य स्थिति का सबसे उल्लेखनीय पहलू यह था कि अमेरिका में इंटरनेशनल कभी भी अंग्रेजी भाषा का अपना कोई अखबार या नियमित प्रकाशन विकसित नहीं कर सका. 1870 के दशक की शुरुआत तक इंटरनेशनल की लगभग 50 शाखाएं और कुल मिलाकर करीब 4,000 सदस्य थे. लेकिन उस समय अमेरिका के औद्योगिक क्षेत्र में बीस लाख से अधिक मजदूर काम कर रहे थे. इस लिहाज से इंटरनेशनल का प्रभाव अभी भी अमेरिकी मजदूर वर्ग के केवल एक छोटे से हिस्से तक ही सीमित था.

उत्कर्ष और संकट

इंटरनेशनल के इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण क्षण पेरिस कम्यून के साथ जुड़ा हुआ था. मार्च 1871 में, फ्रेंको-प्रुशियन युद्ध की समाप्ति के बाद पेरिस के मजदूरों ने एडोल्फ थियर्स की नई सरकार के खिलाफ विद्रोह कर दिया और शहर की सत्ता अपने हाथों में ले ली. इसके बाद इंटरनेशनल राजनीतिक तूफान के केंद्र में आ गया और उसे अभूतपूर्व प्रसिद्धि मिली.

पूंजीपतियों और मध्यवर्ग के लिए वह स्थापित व्यवस्था के लिए एक बड़ा खतरा बन गया था, जबकि मजदूरों के लिए उसने शोषण और अन्याय से मुक्त दुनिया की उम्मीदों को नई ताकत दी. मजदूर आंदोलन असाधारण जीवंतता से भरा हुआ था, और इसके संकेत हर जगह दिखाई दे रहे थे. इंटरनेशनल से जुड़े अखबारों की संख्या भी बढ़ी और उनका प्रसार भी. पेरिस के विद्रोह ने मजदूर आंदोलन को और अधिक मजबूत किया. इसने उसे अधिक क्रांतिकारी राजनीतिक रुख अपनाने और अपने संघर्षों को और तेज करने के लिए प्रेरित किया. फ्रांस ने एक बार फिर इतिहास को यह दिखाया कि क्रांति संभव है. उसने यह भी स्पष्ट किया कि उसका लक्ष्य पूंजीवादी समाज से भिन्न एक नई सामाजिक व्यवस्था का निर्माण होना चाहिए. लेकिन साथ ही यह भी सामने आया कि इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए मजदूर वर्ग को टिकाऊ और सुव्यवस्थित राजनीतिक संगठनों का निर्माण करना होगा. इसके बाद अगला कदम, जैसा कि कार्ल मार्क्स ने कहा था, यह समझना था कि 'मजदूर वर्ग का आर्थिक आंदोलन और उसकी राजनीतिक कार्रवाई एक-दूसरे से अविभाज्य रूप से जुड़े हुए हैं.' इसी समझ के आधार पर 1871 के लंदन सम्मेलन में इंटरनेशनल ने आधुनिक मजदूर आंदोलन के एक अत्यंत महत्वपूर्ण हथियार – राजनीतिक पार्टी – के निर्माण पर जोर दिया. हालांकि यह भी ध्यान रखना

चाहिए कि उस समय राजनीतिक पार्टी की जो अवधारणा विकसित की जा रही थी, वह बाद में अक्टूबर क्रांति के बाद उभरे कम्युनिस्ट संगठनों की अवधारणा की तुलना में कहीं अधिक व्यापक और लचीली थी.

1872 में हेग कांग्रेस के बाद जब इंटरनेशनल ने स्वयं को भंग किया, तब वह अपनी स्थापना के समय वाले संगठन से काफी अलग बन चुका था. अब सुधारवादी धाराएं उसके भीतर बहुमत में नहीं थीं और पूंजीवाद-विरोध पूरे संगठन की साझा राजनीतिक दिशा बन चुका था. इसमें मिखाइल बाकुनिन के नेतृत्व वाली अराजकतावादी धारा जैसी नई प्रवृत्तियां भी शामिल थीं.

इस बीच व्यापक राजनीतिक परिदृश्य भी पूरी तरह बदल चुका था. 1871 में जर्मनी के एकीकरण ने एक नए युग की शुरुआत की पुष्टि कर दी, जिसमें राष्ट्र-राज्य राजनीतिक, कानूनी और क्षेत्रीय पहचान का केंद्रीय रूप बनकर उभरा. इस बदली हुई परिस्थिति में इंटरनेशनल का शुरुआती ढांचा पुराना पड़ने लगा, और उसकी मूल ऐतिहासिक भूमिका भी लगभग पूरी हो चुकी थी. अब काम केवल पूरे यूरोप में हड़तालों के समर्थन का समन्वय करना नहीं रह गया था. न ही मुख्य चुनौती ऐसे सम्मेलन आयोजित करना था जो ट्रेड यूनियनों की उपयोगिता या भूमि और उत्पादन के साधनों के सामाजिक स्वामित्व की आवश्यकता का प्रचार करें. ये विचार अब संगठन की सामूहिक विरासत का हिस्सा बन चुके थे.

पेरिस कम्यून के बाद मजदूर आंदोलन के सामने असली चुनौती यह थी कि वह खुद को किस तरह संगठित करे ताकि पूंजीवादी उत्पादन व्यवस्था का अंत किया जा सके और बुर्जुआ समाज की संस्थाओं को उखाड़ फेंका जा सके.

इंटरनेशनलिज्मः तब और आज

प्रथम इंटरनेशनल की 156वीं वर्षगांठ (2020 में) ऐसे समय में आई जब दुनिया 19वीं सदी के उस दौर से बिल्कुल अलग परिस्थितियों में खड़ी थी. उस समय की उम्मीदों और आज के व्यापक अविश्वास के बीच एक गहरी खाई मौजूद है. इंटरनेशनल के दौर की व्यवस्था-विरोधी चेतना और एकजुटता की भावना का आज उस दुनिया से बहुत कम मेल है जिसे नवउदारवादी प्रतिस्पर्धा, निजीकरण और बाजारवादी सोच ने नए सिरे से गढ़ा है. उस दौर की सामूहिकता की जगह आज वैचारिक अधीनता और व्यक्तिवाद ने ले ली है.

मेहनतकश दुनिया को एक ऐतिहासिक पराजय का सामना करना पड़ा है और वामपंथ अब भी गहरे संकट से उबर नहीं पाया है. नवउदारवादी नीतियों के लंबे दौर के बाद वह व्यवस्था, जिसके खिलाफ मजदूरों ने संघर्ष किया था और कई महत्वपूर्ण जीत हासिल की थीं, फिर से शोषण की उन

परिस्थितियों की ओर लौट आई है जो उन्नीसवीं सदी की याद दिलाती हैं. श्रम बाजार में लागू की गई तथाकथित 'सुधार' नीतियों ने, जिसका मूल प्रगतिशील अर्थ अब पूरी तरह बदल चुका है, साल-दर-साल मजदूरों के लिए अधिक 'लचीलापन' और नौकरी से निकाले जाने की आसान व्यवस्था लागू की है. इसके परिणामस्वरूप असमानताएं और गहरी हुई हैं. सोवियत संघ के विघटन के बाद दुनिया ने कई बड़े राजनीतिक और आर्थिक बदलाव देखे हैं. इनमें वैश्वीकरण से पैदा हुए सामाजिक परिवर्तन, मौजूदा उत्पादन प्रणाली द्वारा पैदा की गई पर्यावरणीय तबाहियां, संपन्न और शोषक अल्पसंख्यक तथा निर्धन बहुसंख्यक आबादी के बीच लगातार चौड़ी होती खाई, पूंजीवाद के इतिहास के सबसे बड़े आर्थिक संकटों में से एक – 2008 का वित्तीय संकट – युद्ध, नस्लवाद और अंधराष्ट्रवाद की तेज होती आंधियां, और हाल के वर्षों में कोविड-19 जैसी वैश्विक महामारी शामिल हैं.

ऐसी परिस्थितियों में वर्गीय एकजुटता पहले से कहीं अधिक आवश्यक हो जाती है. स्वयं कार्ल मार्क्स ने इस बात पर जोर दिया था कि मजदूरों के बीच आपसी टकराव – चाहे वह स्थानीय और प्रवासी मजदूरों के बीच ही क्यों न हो, जिनमें से प्रवासी अक्सर भेदभाव का भी शिकार होते हैं – शासक वर्गों के प्रभुत्व को बनाए रखने का एक बुनियादी साधन है. निस्संदेह, सामाजिक संघर्षों, राजनीतिक पार्टियों और ट्रेड यूनियनों के संगठन के नए रूपों का आविष्कार करना होगा. डेढ़ सौ साल पहले अपनाए गए तौर-तरीकों को ज्यों-का-त्यों दोहराया नहीं जा सकता. लेकिन इंटरनेशनल की वह पुरानी सीख आज भी पूरी तरह सही साबित होती है कि यदि शोषित लोग एक साझा मोर्चा नहीं बनाते, तो उनकी हार निश्चित है. इसके बिना हमारे सामने केवल दो ही संभावनाएं बचती हैं – गरीबों के बीच आपसी संघर्ष और व्यक्तियों के बीच बेलगाम प्रतिस्पर्धा की दुनिया.

आज की तथाकथित 'विश्व व्यवस्था' की बर्बरता समकालीन मजदूर आंदोलन के सामने यह तात्कालिक आवश्यकता रखती है कि वह खुद को फिर से संगठित करे. इसके लिए उसे इंटरनेशनल की दो सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं से सीख लेनी होगी – उसके संगठनात्मक ढांचे की बहुलता और उसके लक्ष्यों की क्रांतिकारी स्पष्टता. 1864 में लंदन में स्थापित उस संगठन के उद्देश्य आज शायद पहले से कहीं अधिक प्रासंगिक हैं. लेकिन वर्तमान चुनौतियों का सामना करने के लिए किसी भी नए इंटरनेशनल को दो बुनियादी शर्तों को अपनाना होगा – बहुलतावाद और पूंजीवाद-विरोध. इन्हीं के आधार पर वह आज की दुनिया में शोषण, असमानता और युद्ध की व्यवस्था को चुनौती देने वाली एक प्रभावशाली ताकत बन सकता है.

(लिबरेशन, जून-2026 में प्रकाशित, हिंदी अनुवादः मनमोहन)